Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation Chennai

वेद प्रकाश

वेदोऽखिलो धर्म-मूलम्

वैदिक वन्दन

व्याख्याता—पं० सत्यकाम विद्यालंकार

परिप्रासिष्यदत् कविः सिन्धोरूर्मावधिश्रितः।
कारू बिभ्रत् पुरूस्पृतम् ॥ साम पूर्वार्चिक ५।१०।१०

सिन्धो समुद्र की ऊर्मी लहरों पर अधिश्रित सवार होकर कवि आनन्दमय प्रभु पुरस्पृह्म विश्वभर के प्रेम की कारू वंशी विभ्रत उठाये हुए परिप्रासिष्यदत् चारों ओर स्वरतरंगों में छा गया।

परम प्रभु आनन्दमय है। अपने आनन्द से ही वह सृष्टि रचता है। जगत में जो कुछ आनन्द प्रद है वह प्रभु का ही अंश हैं। आनन्ददायी सृष्टि करने वाले को ही कवि कहते हैं। प्रभु सबसे बड़ा कवि है। सम्पूर्ण जगत उसका काव्य है।

जगत के सब विधिविधान उसी प्रकार लय-ताल और स्वर के सूत्र में बंधे हुए हैं जैसे कविता होती है। प्रभु स्वयं अनन्त है, उसके स्वर-लय-ताल भी अनन्त हैं। उसकी अनंत स्वरतरंगें सम्पूर्ण पृथ्वी पर ही नहीं, अनंत अन्तरिक्ष में भी व्याप्त हैं।

नदियों की मधुर कलकल ध्वनि में भी प्रभु की स्वर-माधुरी व्याप्त है और महासिंधु के गहन-गंभीर उद्घोष में भी उसी नादब्रह्म के स्वर गूँजते हैं।

जगत के कलहपूर्ण कोलाहल में ही जिनका मन डूवा रहता है वे इस नादस्वर को नहीं सुन पाते। संसारी भोग विलास की मृगतृष्णा में ही भटकने वाले भी प्रभु की इस स्वर लहरी का आनंद नहीं ले पाते। किन्तु जो व्यक्ति विषय भोग से मन को हटा लेते हैं और प्रभुप्रेम में मगन रहने का अभ्यास कर लेते हैं उन्हें अपने चारों ओर संगीत की स्वर लहरी सुनायी देती है।

जो मन शान्त हो जाता है वही सर्वत्र व्याप्त नादस्वर को प्रति-ध्वनित करता है। अन्तर्मन की वीणा जब प्रभुप्रेम का आशीर्वाद पा

(शेष पृष्ठ ८ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

घरेलू शताब्दी योजना

के अन्तर्गत दिसम्बर मास में

भेजी जाने वाली महत्वपूर्ण पुस्तक

सामवेद भाष्य

पूर्वार्चिक

व्याख्याता पं. हरिशरण सिद्धान्तालङ्कार

दिसम्बर मास में इस योजना के अन्तर्गत हम पण्डित जी का सामवेद भाष्य का प्रथम खण्ड दे रहे हैं। पण्डित जी ने चारों वेदों का भाष्य किया है। अब तक प्रकाशित सभी वेद भाष्यों से पं० हरिशरण जी के वेद सरल हैं भाषा में प्रवाह है और प्रभावशाली हैं।

प्रथम खण्ड का मूल्य १४.००

द्वितीय खण्ड प्रकाशित होने पर वह भी ग्राहकों को
उपलब्ध कराया जायगा।

सामवेद भाष्य के अतिरिक्त इस वी. पी. में
१९७४ की डायरी भी भेजी जायेगी।

जो सज्जन इस योजना के सदस्य नहीं बने हैं उनसे फिर निवेदन है कि इस लाभप्रद योजना के सदस्य बनें तथा वैदिक साहित्य के प्रकाशन में अभिवृद्धि में सहयोगी बनें

गोविन्दराम हासानन्द ४४०८ नई सड़क दिल्ली

फोन नं० २६४९४३

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद प्रकाश

संस्थापक—स्व० गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष २२ | अंक ५	दिसम्बर १९७३ | पौष २०३०	वार्षिक मूल्य | तीन रुपये

सम्पादक : विजयकुमार आदरी सम्पादक : ब्र० जगदीश विद्यार्थी

प्रकाश 'अन्धकार नाश'

[पं० हरिशरण सिद्धान्तालंकार के सामवेद भाष्य से]

१ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
अग्न आ याहि वीतये गृणानो हव्यदातये,

१ २र ३ १ २
नि होता सत्सि बर्हिषि ॥१॥

१—हे [**अग्ने**] 'आगे ले चलने वाले' प्रभो ! आपका 'अग्नि' यह नाम ही वेद में सबसे अधिक बार आया है। यह मानव जीवन के लक्ष्य का भी संकेत कर रहा है कि 'तूने मोक्ष तक पहुंचना है। पहुंचना होगा प्रभु कृपा से।' सो हे प्रभो ! आप [**आयाहि**] आइये और [**वीतये**] हमारे हृदयान्धकार का ध्वंस कर दीजिये। (वी=आसन=परे फेंक देना।) उस प्रभु के प्रकाश में वृत्र का अन्धकार कहाँ ? उस ज्योति में तो काम भस्मीभूत हो जाता है।

२—[**गृणानः**] (गृणाति आह्वयति भक्तान् कल्ययाणवर्त्मनि) हमें कल्याण के मार्ग का उपदेश देते हुए [**हव्य दातये**] (प्रोणयितव्य हुः प्रीणनार्थोपि) भक्तों के कर्म बन्धनों के उच्छेद के लिये हूजिये। जो भक्त नहीं वे तो प्रभु का आह्वान सुनने ही क्यों लगे हैं ? हव्य वे जीव हैं जो प्रभु में श्रद्धा से उसके कृपा-पात्र बनते हैं।

३—[**होता**] महान् उपदेशक प्रभो ! (ह्वेञ् शब्दे) [**बर्हिषि**] (वर्ह् इस्=नष्ट करना)=जिसमें वासना व अज्ञान का अन्धकार नष्ट हो

(शेष पृष्ठ ८ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारे धर्म ग्रन्थों में वर्णित 'अश्व'

श्री वा० विष्णुदयाल मॉरीशस

१०-१२ मुख्य उपनिषदों में से एक के नाम तक में 'अश्व' शब्द आता है। वह है श्वेताश्वतर उपनिषत्। 'श्वेताश्व' का अर्थ है 'सफेद अश्व वृहदारण्यकोपनिषत् का आरम्भ एक अश्व विशेष के विशद वर्णन से होता है।

हमें इस उपनिषत् में कहा जाता है कि यज्ञ सम्पादित हो रहा है। वह है अश्वमेध यज्ञ। यज्ञ विश्व में होता रहता है। नदी का जल चलता रहता है। जिसकी मर्जी हो वह उसका प्रयोग करे। फलदार पेड़ों पर फल पड़े रहते हैं। हम उन्हें लेकर न खायें तो वे सड़ जायेंगे, जमीन पर गिरेंगे और मच्छरों का जमघट लगेगा। पेड़ को किसी ने पानी न दिया हो तो भी वह बढ़ता रहा क्योंकि वर्षा होती है तो उसे भोजन प्राप्त होता है। वह पाँव से जल पीता है, पादप है। वह हमें पाँव का तिरस्कार करने से रोकता है जो शरीर का बोझ ढोता रहता है।

विश्व को एक घोड़े के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिसका आर पार पाना मुश्किल है। उस घोड़े का मुंह उषा है। कौन अभागा होगा जो सूर्योदय से पूर्व उठना अस्वीकार करेगा? उषा काल में उठ बैठना अरुणोदय देखना आनन्दप्रद है। दिन के आरम्भ में ही जिसे खुदा होने का मौका मिलता है वह दिन भर डट कर काम करता है।

घोड़े की छाती की पृथिवी से उपमा दी गई। हम जमीन पर पैर नहीं धरा करते हैं, अश्व के शरीर पर उसी तरह चलते हैं ठीक जिस प्रकार रेल गाड़ी पटरी पर चला करती है। जिसे अश्व के शरीर पर चलने का खयाल होता है वह निर्जीव पृथिवी को सजीव बना छोड़ता है। भौतिकवाद उसके लिए है ही नहीं।

एक वृहदश्व विद्यमान है, यह कैसे माना जाय? क्या सचमुच विश्व में एक वृहद् यज्ञ हो रहा है? जल प्रपात देखकर क्या सब किसी को मालूम हो जाया करता है कि इसमें बिजली छिपी है? यंत्र से काम लिया जाय तब विद्युत उत्पन्न हो सकता है। जिसे देखना आता हो वही यज्ञ को सम्पादित होते देखता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उपनिषत् में वर्णित अश्व हमें यज्ञ का महत्व दिखाता है। यज्ञ से विमुख होना पड़ा जब पशु हिंसा होने लगी। अश्व जैसे सुन्दर जीव का वध कैसे किया जा सकता है ? यज्ञ अध्वर है, हिंसा रहित है।

चारों वेदों में यज्ञ का पर्याय अथवा कहीं विशेषण रूप में 'अध्वर' शब्द का प्रयोग सैकड़ों स्थानों पर पाया जाता है, जिसकी व्युत्पति करते हुए निरुक्तकार ने लिखा है—

अध्वर इति यज्ञ नाम ध्वरहतिहि सा कर्मा प्रतिषेधः।

अर्थात् 'अध्वर' यज्ञ का नाम है जिसका अर्थ है हिंसारहित कर्म है।

यह दुर्भाग्य की बात है कि बाद के विकृत कालों में यज्ञ के कतिपय गर्हित अनुष्ठानों के कारण और यजमान का रूप विकृत हो गया। यज्ञों में यज्ञ का अर्थ शुभ कर्म है और यजमान का अर्थ शुभ कर्मों का कर्ता है। संस्कृत में पितृ यज्ञ और अतिथि यज्ञ का विधान है। स्पष्टतः इन शब्दों से यज्ञ का अर्थ माता-पिता और अतिथि का वध नहीं निकाला जा सकता यह सत्य है कि वेदों की शिक्षाओं से अलग हो जाने के कारण लोग कालान्तर में मांसाहार करने लग गये और अतिथि के लिए गोघ्न शब्द व्यवहृत होने लगा जिसका धात्वर्थ होता है गौ का वध करने वाला। परन्तु बाद में यह उन अतिथियों के लिए प्रयोग किया जाने लगा जिनके लिए बध्य मानी जाती थीं। चारों वेदों में केवल ऋगवेद के एक मंत्र में गोघ्न शब्द का उल्लेख है।

आ रेते गोघ्नमुत पुरुषघ्नक्ष यद
वीर सुम्नभस्मे ते अस्तु
मृड़ा चनों अधि च ब्रूहि दे वाधा
च नः शर्म यच्छ द्वि वही ।।

अर्थात् हे शत्रुओं का नाश करने वाले, गोहत्या करने वाले और नरहत्या करने वाले दुष्ट को हम से दूर रख। हमारे लिए तेरा कल्याण-प्रद व्यवहार प्राप्त हो। देव ! हम पर कृपा करें और उपदेश दें। हे लोक और परलोक को बढ़ाने वाले स्वामिन् ! हमारे लिए कल्याण दें।

जैसे इस मंत्र में गोघ्न और पुरुषघ्न दुष्ट पुरुष का बोधक है इसी प्रकार ऋग्वेद ६।२२।४ और ७।१३।१ में "असुरघ्न" असुरों को नाश करने वाले के अर्थ में आया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैदिक धर्म

ले०—प्रो० श्रीकान्त उपाध्याय एम० ए०

मनुष्य के जीवन का लक्ष्य है—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। इन्हें ही पुरुषार्थ कहा गया है। इन चारों पुरुषार्थों में धर्म का स्थान प्रथम माना गया है। कदाचित् इसलिए कि धर्म के बिना अर्थ, काम और मोक्ष अप्राप्य अथवा अपूर्ण रह जाते हैं। सीधे-सादे शब्दों में एक बात यह कही जा सकती है कि धर्म अत्यन्त अनिवार्य है। बिना धर्म के कुछ भी संभव नहीं किसी की भी रक्षा नहीं। कहा भी गया है धर्म की रक्षा करो तो धर्म तुम्हारी रक्षा करेगा। धर्मो रक्षति रक्षितः। धर्म की इसी महत्ता के कारण आज संसार में अनेकानेक धर्म स्थान, धार्मिक मठ, मन्दिर, मस्जिद और गिरजा घर बने, बन रहे हैं और भविष्यत् न में जाने कितने बनते चले जायेंगे। धर्म को लेकर संसार में न जाने कितने-कितने काण्ड हो चुके हैं। एक से एक अच्छे और एक से एक बुरे। इन सब कार्यों का गम्भीर विवेचन किया जाय तो पता लगता है कि धर्म ही इन अच्छे और बुरे दोनों प्रकार के कार्यों के मूल में है धर्म के इस अनन्त रूपात्मक स्वरूप को देखकर साधारण बुद्धि वाले प्राणी को आज यह निश्चय करना अत्यन्त दुष्कर है कि कौन सा धर्म ग्राह्य है और कौन सा धर्म अग्राह्य। धर्म के इस झमेले में पड़कर बहुत से लोग तो इतने अस्थिर हो उठते हैं कि वे धर्म नाम से घृणा करने लग जाते हैं और धर्म को ढोंग तथा चूँ चूँ का मुरब्बा अथवा कोई व्यर्थ सी वस्तु समझने लगते हैं और अपने को धर्म और धर्मावलम्बियों से दूर रखने की सतत चेष्टा में संलग्न रखते हैं। धर्म के प्रति ऐसी उपेक्षा का कारण क्या हो सकता है? धर्म के प्रति उदासीन होने वाले व्यक्तियों की अयोग्यता अथवा धर्म की अपनी दुर्बलताएं एवं उसकी अपनी कृत्रिमताएँ?

आज का मानव निश्चित रूप से अत्यधिक बुद्धिवादी, तार्किक एवं उपयोगिता वादी हो चला है। किसी बात को आँख मूँदकर स्वीकार करना, किसी का अन्ध भक्त बनना, बिना समझे बूझे किसी परिणाम पर पहुँचना आज के वैज्ञानिक युग में संभव नहीं। आज तो प्रत्येक बात में बाल की खाल निकालने के लिए लोग उद्यत रहते हैं। फिर धर्म को कैसे तरह दी जा सकती है। आज तथाकथित धर्म की बहुत सी रूढ़ियाँ टूट कर चूर-चूर हो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi.

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
चुकी हैं। आज बहुत से धर्मावलम्बी केवल कूपमंडूक की भाँति कृत्रिम आडम्बर एवं परम्परागत रूढ़ियों के चक्कर में पड़कर उसी को अपना संसार मान चुके हैं जिनकी ओर से आज का बुद्धिवादी मानव बिल्कुल विमुख हो चला है। थोड़े नहीं बहु संख्यक लोग आज अधार्मिक एवं नास्तिक बनते चले जा रहे हैं। इसका कारण यदि कुछ भी है तो इस धर्म-बहुल-संसार में धर्मों की रूढ़ियाँ तथा उन धर्मों की अवैज्ञानिकता तथा सारहीनता। नहीं तो रात-दिन धर्म-धर्म चिल्लाने वालों की सन्तानें क्योंकर अधार्मिक नास्तिक एवं भ्रान्त-धारणा-युक्त बनती चली जा रही हैं? केवल इतना ही नहीं अत्यन्त धार्मिक देश, राष्ट्र, परिवार तथा वर्ग आज अधार्मिक एवं नास्तिक बनता चला जा रहा है। आज के युग में बढ़ते हुए कम्यूनिज्म के प्रचार को इसका ज्वलन्त उदाहरण मान सकते हैं।

समय आ गया है जब कि धर्म की एक-एक बात को बुद्धि की कसौटी पर कसा जायगा और उपयोगिता की तुला में साधकर रखा जायगा। धर्म के पोपले और पचड़े अब अधिक दिन नहीं ठहर सकते। वेद, उपनिषद्, दर्शन आदि का नाम ले-लेकर अनाप-शनाप बातों का प्रचार अब अधिक दिन नहीं चल सकता। आज का बुद्धिवादी मानव तो प्रत्येक बात को अच्छी तरह जाँच कर स्वीकार कर रहा है फिर धर्मों के विषय में अन्ध श्रद्धा और अन्ध भक्ति का कोई स्थान नहीं। आज धर्म के नाम पर भेद-भाव की सृष्टि करना, मानव को मानव से ऊँच-नीच बतलाना, छुआ-छूत का आडम्बर रचना, हत्या, पातक और अपनी तृष्णा के तृप्त्यर्थ झूठे-मूठे जाप आदि करवाना, पशुबलि करना, एक ईश्वर के स्थान पर करोड़ों ईश्वर की सृष्टि करना, अपने देवता को श्रेष्ठ और दूसरे के देवता को निम्न बतलाना, स्वधर्मानुयायियों को अन्यों से श्रेष्ठ मानना और इसी के आधार पर दूसरे धर्मावलम्बियों को कष्ट पहुँचाने की चेष्टा करना आदि अनेक ऐसी मिथ्या बातें हैं जिनको अपना कर कोई भी धर्म इस वैज्ञानिक युग में जीवित नहीं रह सकता।

आज तो धर्म का वही स्वरूप सच्चा और अनुकरणीय है जो समस्त मानव समाज के लिये एक ही बात बतलाता है। जिस धर्म में मानव-मानव के बीच भेद-भाव की बातें हैं वह सार्वजनिक नहीं और जो मानव मात्र के लिये नहीं वह सच्चा धर्म नहीं। जो धर्म किसी स्थान विशेष के निवासियों के लिए ही बनाया जाय वह धर्म नहीं वह तो देश और काल तथा परिस्थितियों के अनुकूल परिवर्तित होने वाला साधारण व्यवहार मात्र ही कहा जा सकता है। धर्म तो देश और काल के लघु बन्धन में नहीं बाँधा जा सकता। सार्वभौमिकता, सार्वजनीनता एवं तर्क वरिष्ठता सच्चे धर्म

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के मूल में निहित होती हैं। यस्तर्केणासन्धत्ते सधर्म वेद नेतरः। जो तर्क की कसौटी पर खरा उतरे और जिसमें धृतिः क्षमा आदि दश लक्षण उपलब्ध हों वही धर्म की श्रेणी में परिगणित हो सकता है वेदोऽखिलो धर्म मूलम्। वेद ही सच्चे धर्म का मूल है। वैदिक धर्म ही सच्चा धर्म है। वेदों के अतिरिक्त धर्म की पूर्ण व्याख्या अन्यत्र अनुपलब्ध है। वेद के आधार पर अधिष्ठित वैदिक धर्म का प्रचार ही महर्षि दयानन्द सरस्वती ने किया और उनके द्वारा संस्थापित आर्य समाज भी आज उसी वैदिक धर्म का प्रचार कर रहा है। वैदिक धर्म अत्यन्त वैज्ञानिक धर्म है। इसकी मान्यताएँ सर्वथा तर्क सम्मत, सार्वभौमिक, सार्वजनीन और देश एवं काल की सीमा से परे की हैं। आज इसी वैदिक धर्म के प्रचार की आवश्यकता है जिसका उद्घोष है—कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने संसार के सभी बुद्धि-वादियों को सम्बोधित करते हुए विज्ञानानुमोदित वैदिक धर्म का प्रचार किया। यही वेदानुमोदित, सार्वभौम, सार्वजनीन और सार्वकालिक धर्म है जिसका अनुसरण पक्षपात रहित होकर करने से लोगों का कल्याण सम्भव है अन्यथा नहीं।

(पृ० ३ का शेष)

गया है उस हृदयान्तरिक्ष में आप [नि सत्सि] निरन्तर विराजमान होते हैं। सर्वव्यापक प्रभु का दर्शन पवित्र हृदय में ही होता है। आपके साक्षात्कार से, आपके सम्पर्क में आकर, शक्तिसम्पन्न बन कर, मैं इस मन्त्र का ऋषि 'भारद्वाज'='अपने में शक्ति को भरने वाला' बन पाऊँ।

भावार्थ—हृदय में प्रभु का प्रकाश होते ही अन्धकार नष्ट हो जाता है। इस प्रकाशमय हृदय में सन्मार्ग की प्रेरणा देते हुए प्रभु भक्तों के कर्म बन्धनों का उच्छेद करते हैं। वासना शून्य हृदय में ही उस महोपदेशक की प्रेरणा सुनाई देती है।

(पृष्ठ १ का शेष)

लेती है तब उसकी तारें अनंत में व्याप्त स्वर तरगों से स्वयं झनझना उठती हैं। तब उन्हें स्पष्ट प्रतीत होने लगता है कि सागर के वक्षःस्थल से उठता हुआ उद्घोष विशाल व्योम के ओरछोर में व्याप्त हो रहा है।

उन स्वरों में प्रभु प्रेम की पुकार है। जो उसे सुनते हैं वे प्रेम विभोर होकर समस्त विश्व को प्रेम, करूणा, दया, और सहानुभूति का प्रकाश देकर नया जीवन देते हैं। प्रभुप्रेम की इस वंशी के स्वरों में ऐसा आध्यात्मिक उन्माद होता है कि जो इस स्वरगंगा में एक बार नहा लेता है उसे संसार का कोई अन्य स्वर अपने जाल में नहीं बांध सकता। वह बंधनमुक्त हो जाता है। इन स्वर सूत्रों में बंधकर वह प्रभु का साक्षात्कार कर लेता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

साहित्य समीक्षा

(समीक्षक-आचार्य धर्मदेव विद्यामार्तण्ड, आनन्द कुटीर, ज्वालापुर)

वैदिक सम्पदा ले० श्री पं० वीरसेनजी वेदश्रमी, प्रतिष्ठित स्नातक, गुरुकुल वृन्दावन वेदसदन महारानीपथ, इन्दौर-१

प्रकाशक—श्री गोविन्दराम हासानन्द-४४०८, नई सड़क दिल्ली-६. पृष्ठ सं ५०४ पृष्ठ, मूल्य २०-००, राज संस्करण ३०-००।

यह पुस्तक श्री पं. वीरसेन वेदश्रमी जो गुरुकुल वृन्दावन के प्रतिष्ठित स्नातक और आर्य जगत् में कर्मकाण्ड विशारदता और शुद्ध सस्वर वेदपाठ के कारण ख्याति प्राप्त हैं—ने लिखी है जो उनकी विद्वत्ता और वेदों के गम्भीर अनुशीलन को सूचित करती है। इस लगभग ५०० पृष्ठों की पुस्तक में उन्होंने अध्यात्म प्रकरण (३७ से ७७ पृष्ठ तक) वैदिक समाज शास्त्र, वैदिक समाजवाद में पारिवारिक आदर्श-गृहस्थ निर्माण आदर्शवाद (७८ से १३३पृ) सामाजिक समस्या—वेद में यातायात, वेद में चिकित्सा विज्ञान (१३४ से २१४ पृ.) वैदिक अर्थशास्त्र (२१५ से २२६), वैदिक गणित विज्ञान, रेखा गणित (२२७ से २४७ पृ.) शासन (राजनीति) शिक्षा विज्ञान, वेदों में विज्ञान, भाषा विज्ञान, ऋतु विज्ञान, भूतत्व विज्ञान, व पदार्थ विज्ञान, अग्नि विज्ञान, विमान विज्ञान, जल विज्ञान, वृष्टि-विज्ञान, याज्ञिक वृष्टि विज्ञान (३२७-४५०), उपसंहार (धर्म)—इस प्रकार विभाजन करते हुए वेदों के आधार पर इन पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। विद्वान् पाठक इन प्रकरणों को पढ़ते हुए अनुभव करेंगे कि सुयोग्य लेखक महोदय सचमुच वेदश्रमी हैं। उन्होंने वेदों का गहरा अध्ययन किया और उसके अनेक रत्नों को "वैदिक सम्पदा" के रूप में जनता के सामने प्रस्तुत किया है। विज्ञान में श्री पं० वीरसेन जी की विशेष रुचि प्रतीत होती है और यज्ञों द्वारा वृष्टि कराने के सम्बन्ध में उन्होंने अनेक सफल परीक्षण भी किए हैं जिनमें से कुछ का उल्लेख इस पुस्तक में भी किया गया है। विद्वान लेखक ने पृ.४५२ पर इस ग्रन्थ के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
विषय में लिखा है कि त्रिसूत्री प्रश्नों का उत्तर ही ग्रन्थ में प्रस्तुत है हम क्या हैं ईश्वर क्या है ? ईश्वर के साथ हमारा क्या सम्बन्ध है और ईश्वर के प्रति हमारा क्या कर्त्तव्य है—इन प्रश्नों का उत्तर इस ग्रन्थ का अध्यात्म विज्ञान प्रकरण प्रस्तुत करता है।

हमारा प्राणियों के साथ एवं मनुष्यों के साथ क्या सम्बन्ध है तथा उनके प्रति हमारा क्या कर्त्तव्य है। इन प्रश्नों का उत्तर इस ग्रन्थ का समाज शास्त्र, अर्थ शास्त्र तथा राजनीति प्रकरण उपस्थित करता है।

हमारा प्रकृति के साथ क्या सम्बन्ध है और प्रकृति का हम कैसे क्या उपयोग लें इसका इस ग्रन्थ का शिक्षा एवं तदन्तर्गत वैदिक विज्ञान का प्रकरण उपस्थित करता है। यह ठीक ही है किन्तु विद्वान् लेखक ने सरलता-पूर्वक स्वीकार किया है कि—"यद्यपि इन प्रकरणों में जितना प्रतिपादन करना चाहिए उतना प्रतिपादन नहीं हो सका है तथा यह उसका प्रतीकमात्र प्रारम्भ रूप ही है। समयाभाव से अनेक महत्वपूर्ण प्रकरण, दर्शन, सृष्टि विज्ञान, भूतत्व विज्ञान आदि को हम लिख ही नहीं सके।" (पृ. ४५२)

इस महान विश्व की दृष्टि से विद्वान् लेखक को कितने अंश में सफलता प्राप्त हुई है क्योंकि इनके अतिरिक्त भी बहुत सी समस्यायें हैं जो भारत तथा विश्वको पीड़ित कर रही हैं और जिनका न केवल तुलनात्मक दृष्टि से विचार अपेक्षित था जिन पर इसमें प्रकाश नहीं डाला जा सका जैसे कि सुयोग्य लेखक नेप्राक्कथन में लिखा ही है कि— "संभव है कतिपय विषय का शीघ्रता में उल्लेख न हो सका हो और विषयों पर अत्यल्प लिखा गया हो और कतिपय विषय अस्पष्ट भी रह गये हों। समय मिलने पर उनको संशोधित एवं परिवर्धित किया जा सकता है। अभी तो यह केवल ग्रन्थ की रूप रेखा और नमूना मात्र है। (प्राक्कथन पृ. ८)—इसको ध्यान में रखते हुए यह सब प्रकार से उपादेय है और अभिनन्दनीय है। यद्यपि अन्य अनेक आवश्यक समस्याओं पर भी विचार वैदिक दृष्टिकोण से किया जाना लाभप्रद होता।

सम्पूर्णतया यह ग्रन्थ वेदों के विषय में भी अत्यन्त ज्ञानवर्धक होने के कारण विशेष रूप से उपादेय और स्वाध्याय करने योग्य है। हम इसका सर्वत्र प्रचार चाहते हैं। इसके होते हुए भी 'वेद द्वारा समस्त समस्याओं पर समाधान' पर तुलनात्मक दृष्टि से एक ऐसे विस्तृत ग्रन्थ की आवश्यकता है जिसमें इस समय की समस्त समस्याओं और उनके समाधान पर गंभीर विचार करते हुए वेदों द्वारा प्रस्तुत समाधान को ही सर्वोत्तम सिद्ध किया जाए (श्री पं० वीरसेन जी) का ग्रन्थ इस विषय में एक अभिनन्दनीय प्रयास है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(११) वेदों में गुण कर्म स्वभाव से, वर्ण नियत करने की आज्ञा है, जिसको पुराण भी कहते हैं। परन्तु यही जन्म से ही पुराणों को आज्ञा बतलाते हैं और मानते हैं।

(१२) वेदों में मद्य और मांस का निषेध है, परन्तु पुराणों में लेखानुसार यज्ञ करके घोड़े और गाय को खाना भी लिखा है। और बकरे पूरा तो प्रतिदिन देवी का नाम लेकर खाते चले जाते हैं और बड़े-बड़े देवताओं के भोग लगाने की आज्ञा है।

(१३) चोरी, जारी, हिंसा करना आदि वेद में बुरे कर्म बतलाये हैं। परन्तु पुराणों में बड़े-बड़े देवता इन कर्मों को वेधड़क करते थे।

(१४) वेदों में स्त्रियों के लिये सर्वोपरि पति सेवा करना लिखा है, परन्तु पुराणों में इसकी महिमा गाते हुए, उपवास और वृक्षादि की पूजा, और गंगा आदि स्नान से उनको मुक्ति बतलाई है।

(१५) वेदों में उत्तम सत्संगादि करने को तीर्थ माना है परन्तु पुराणों में गंगादि स्थान विशेष को तीर्थ बतलाया है और उनके बड़े-बड़े महात्म्यों से पुराण भरे पड़े हैं।

(१६) वेदों में सत्यादि नियमों का पालन तथा भक्ति सहित इच्छाओं को रोकना तप कहा है और पुराणों में धूनी लगा बीच में बैठने को तप कहा है।

(१७) वेदों में नियम पालन को व्रत बतलाया है, वहां पुराणों में भूखे रहने को व्रत कहा है।

(१८) वेदों में स्त्रियों को एकान्त में पुरुष से सम्भाषण करने की आज्ञा है, परन्तु पुराणों के अनुसार उसको चेली बना गुरु मंत्र भी दे देनी उचित है।

(१९) वेदानुकूल कर्मों का फल प्रत्येक को मिलता है, परन्तु पुराणों के कथनानुसार पुत्रादि के कर्मों से बड़े-बड़े पापी का तरना लिखा है।

(२०) वेदों में परमेश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप अजन्मा, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, निराकार, अजर, अमर, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, न्याय-कारी, दयालु, अनन्त, सब जीवों का न्याय से फल दाता, आदि लक्षण वाला माना है परन्तु पुराणों में ईश्वर साकार, निराकार, विकार वाला माना है। जो स्वभक्तों की रक्षा के लिये कच्छ, मच्छ और बाराह आदि अवतार लेता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यज्ञोपवीत का महत्त्व

(ब्र० जगदीश विद्यार्थी रिसर्च स्कालर)

[४ नवम्बर १९७३ को स्वर्गीय गोविन्दराम हासानन्द के पौत्रों चि० अनिल कुमार व चि० अजय कुमार का यज्ञोपवीत संस्कार सम्पन्न हुआ। उस अवसर पर ब्र० जगदीश विद्यार्थी का यह लेख संस्कार में उपस्थित सज्जनों को वितरित किया गया। पाठकों के लाभार्थ यह लेख यहां प्रकाशित किया जा रहा है।] —सम्पादक

वैदिकधर्म में संस्कारों का बहुत महत्त्व है। वैदिकधर्म के अनुसार मनुष्य की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति के लिए सोलह संस्कारों का करना अत्यन्त आवश्यक है। सभी संस्कार महत्त्वपूर्ण हैं, परन्तु इन सब में उपनयन संस्कार एक विशिष्ट स्थान रखता है। यही वह संस्कार है जिससे बालक की शिक्षा और दीक्षा का प्रारम्भ होता है एवं उसे द्विजत्व की प्राप्ति होती है। इसी समय से उसे वैदिक-कर्मकाण्ड और यज्ञ करने का अधिकार प्राप्त होता है, जैसा कि वेद में भी आदेश है —

यो यज्ञस्य प्रसाधनस्तन्तुर्देष्वेवाततः। तमाहुतं नशीमहि॥

—ऋ० १०। ५७। २

अर्थात् सामान्य जनों की यह कामना है कि जो यज्ञ का उत्तम साधनरूप तन्तु=उपवीत का धागा, विद्वानों में प्रचलित है, उस विधि-विहित सूत्र को हम प्राप्त करें।

महर्षि ने पूना-प्रवचन १४ वें प्रवचन में कहा था—

बालक मूर्ख और छोटा होने के कारण माता-पिता के अधीन रहता है। आठ वर्ष की अवस्था तक उसमें धर्म-सम्बन्धी काम करने की योग्यता नहीं होती। इसलिए हमारे धर्मशास्त्रों ने व्रतबन्ध (यज्ञोपवीत) होने से पहले बालकों के लिए नित्यकर्म का विधान नहीं किया है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यज्ञोपवीत धारण न करना अपने-आपको विद्या तथा यज्ञ के अधिकार से वञ्चित रखना है और यज्ञोपवीत के बिना बालक द्विज भी नहीं बन सकता अतः उन्नतिशील नर-नारियों को यज्ञोपवीत संस्कार पर विशेष ध्यान देना चाहिए। वैदिकधर्म के अनुसार यज्ञोपवीत एक अत्यन्त वैज्ञानिक और महत्त्वपूर्ण संस्कार है। आचार्य अथवा गुरु यज्ञोपवीत देते समय, अथवा यज्ञोपवीत बदलते समय जिस

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
मन्त्र को उच्चारण करता है उसी से यज्ञोपवीत की महिमा स्पष्ट है —

ओ३म् यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत् सहजं पुरस्तात् ।
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः ॥
यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥

—पारस्कर गृह्यसूत्र २ । २ । ११ ॥

परमपवित्र, आयुवर्धक, अग्रणीयता का द्योतक, श्वेतवर्ण का यह यज्ञोपवीत, जिसे प्रजापति परमात्मा ने प्रत्येक बालक को सहज स्वभाव से, गर्भ से, जरायु (गर्भ की झिल्ली) के रूप में प्रदान किया है, उसको तू धारण कर, पहन। यह यज्ञोपवीत तुझे बल और तेजदायक हो। तू यज्ञोपवीत है, मैं तुझे यज्ञ की यज्ञोपवीतता के साथ पहनता हूँ।

इस मन्त्र में यज्ञोपवीत को बल और तेज प्रदान करने वाला कहा गया है। यज्ञोपवीत के तीन तारों में बल और तेज दृष्टिगोचर नहीं होता, परन्तु जो इन तारों के रहस्य को हृदयङ्गम कर लेता है, उसमें बल और तेज का सञ्चार हो जाता है। इसके रहस्य को समझकर ही लाखों सिक्खों, राजपूतों और मरहठों ने अपने सिरों की आहुति दे दी, परन्तु यज्ञोपवीत का त्याग नहीं किया।

जिस प्रकार भारतीय शासन के तिरंगे झण्डे का कोई विज्ञान है, इसमें तीन रङ्ग क्यों हैं ? इसके मध्य में स्थित चक्र का क्या अभिप्राय है ? इसी प्रकार यज्ञोपवीत का भी रहस्य है। यज्ञोपवीत में नौ तन्तु, तीन दण्ड और पाँच गांठें होती हैं। इसके नौ तन्तुओं में नौ देवताओं की कल्पना की गई है यथा—

ओंकारः प्रथमे तन्तौ द्वितीयेऽग्निस्तथैव च ।
तृतीये नागदैवत्यं चतुर्थे सोमदेवता ॥
पंचमे पितृदैवत्यं षष्ठे चैव प्रजापतिः ।
सप्तमे मरुतश्चैव अष्टमे सूर्य एव च ॥
सर्वे देवातस्तु नवमे इत्येतास्तन्तु देवताः ॥

—सामवेदीय छान्दोग्यसूत्र परिशिष्ट

पहले तन्तु में ओंकार, दूसरे में अग्नि, तीसरे में अनन्त, चौथे में चन्द्रमा, पाँचवें में पितृगण, छठे में प्रजापति, सातवें में वायुदेव, आठवें में सूर्य और नवें तन्तु में सर्वदेवता प्रतिष्ठित हैं। यज्ञोपवीत धारण करने-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वाला बालक यज्ञोपवीत के तन्तुओं में स्थित नौ देवताओं के निम्न गुणों को अपने अन्दर धारण करता है :—

(१) ओंकार—एकतत्त्व का प्रकाश, ब्रह्मज्ञान।
(२) अग्नि—तेज, प्रकाश, पापदाह।
(३) अनन्त—अपार धैर्य और स्थिरता।
(४) चन्द्रमा—मधुरता, शीतलता, सर्वप्रियता।
(५) पितृगण—आशीर्वाद, दान और स्नेहशीलता।
(६) प्रजापति—प्रजापालन, स्नेह, सौहार्द।
(७) वायु—पवित्रता, बलशालिता, धारणशक्ति।
(८) सूर्य—प्रकाश, अन्धकारनाश, मल-शोषण।
(९) सर्वदेवता—दिव्य और सात्त्विक जीवन।

जो यज्ञोपवीत के इन गुणों को स्मरण कर, इनसे प्रेरणा प्राप्त करेगा, उसका जीवन उच्च, महान् यशस्वी और तेजयुक्त क्यों न होगा ?

नौ तन्तुओं का एक और भी रहस्य है। यह शरीर अथर्ववेद के अनुसार "**अष्टाचक्रा नवद्वाराः**" (१०।२।३१) आठ चक्र और नौ द्वारों का नगर है। अतः नौ तन्तु हमें एक सन्देश देते हैं कि प्रत्येक द्वार पर एक-एक प्रहरी नियत करना है, जिससे हम कोई बुरा कर्म न कर सकें, इन नौ द्वारों से कोई बुराई हमारे अन्दर प्रविष्ट न हो सके। ये नौ द्वार हैं— दो आँख, दो कान, दो नासिका के छिद्र, एक मुख और दो मल-मूत्र त्यागने के छिद्र। हमें प्रत्येक द्वार पर एक-एक चौकीदार बैठाना चाहिये।

हम आँखों से अच्छे दृश्य देखें, प्रभु की रचना के सौन्दर्य को निहारें, गन्दे दृश्य और स्वास्थ्य को नष्ट करने वाले सिनेमादि न देखें। हमारी दृष्टि ऐसी हो—

मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पश्यति॥

दूसरे की स्त्रियों को माता के समान, दूसरों के धन को मिट्टी के समान, और सब प्राणियों को अपने समान देखें, क्योंकि ऐसा देखनेवाला ही वास्तव में देखता है।

कानों से हम परमात्मा का गुणगान सुनें, प्रभु का कीर्तन सुनें, गाली-गलौच और गन्दे गाने न सुनें। यज्ञोपवीतधारी का जीवन वेदमय होना

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चाहिए और वेद के अनुसार—

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम। —य० २५। २१॥

कानों से हम उत्तम बातें सुनें।

इसी प्रकार नाक से उत्तम, दिव्यगन्ध ही सूंघें, विषयवासनाओं की गन्ध ही न लेते रहें। जिह्वा से स्वास्थ्य-वर्धक उत्तम और सात्त्विक पदार्थों का सेवन करें। उपस्थ और गुदा का भी संयम रखें। सच्चे ब्रह्मचारी बनें। यह है यज्ञोपवीत के नौ तन्तुओं का विज्ञान!

यज्ञोपवीत में तीन धागे अथवा तार होते हैं। तीन ही तार क्यों? इसका भी वैज्ञानिक रहस्य है। हमारे यहाँ तीन की संख्या का बड़ा महत्त्व है। सत्त्व, रज और तम—गुण तीन; पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्यु—लोक तीन; गार्हपत्य, आहवनीय, दक्षिण—अग्नि तीन; ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य—यज्ञोपवीत के अधिकारी भी तीन; अतः यज्ञोपवीत में तीन धागों का होना सुसंगत है।

यज्ञोपवीत ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ—तीन आश्रमों में रहते हुए ही धारण किया जाता है। चतुर्थाश्रम संन्यास में पहुँचने पर इसे उतार दिया जाता है। क्योंकि यह तीन आश्रमों में धारण किया जाता है इस अभिप्राय से भी इसमें तीन धागे हैं।

ये तीन दण्ड मन, वचन और कर्म की एकता सिखाते हैं। जो मन में है वही वचन में होना चाहिए और उसी प्रकार कर्म करना चाहिए। जब मन, वचन और कर्म में एकता होती है, तब मनुष्य महात्मा बन जाता है, अन्यथा वह दुरात्मा हो जाता है।

तीन दण्डों का एक और भी अभिप्राय है। वह यह कि कायदण्ड, वाग्दण्ड और मनोदण्ड अर्थात् शरीर, वाणी और मन को संयम में रखना। कायसंयम के द्वारा ब्रह्मचर्य का पालन, गुरुओं का आदर और सत्कार, अहिंसा और तपादि; वाणीसंयम के द्वारा सत्य बोलना, हितकर बोलना, मित बोलना और मधुर बोलना तथा स्वाध्याय करना; और मन-संयम के द्वारा मन के विकारों को दूर करके उसे शुद्ध, पवित्र और शिव-संकल्पों वाला बनाना तथा ईश्वर-चिन्तन करना। यज्ञोपवीतधारी के लिए शरीर, वाणी और मन का यह संयम अत्यावश्यक है।

तीन तारों में एक तीसरा रहस्य भी छुपा हुआ है। यह संसार त्रिगुणात्मक है—सत्त्व, रज और तम की तीन लड़ियों में समस्त प्राणी बंधे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
हुए हैं। यज्ञोपवीत के तीन धागे ये स्मरण कराते हैं कि हमें इस संसार से निकलना है। संन्यासी संसार के मोह, माया और ममता से निकल जाता है इसलिए संन्यासाश्रम में यज्ञोपवीत उतार दिया जाता है।

यज्ञोपवीत के तीन तारों में विश्वविज्ञान भरा हुआ है। ये तीन तार एक और संकेत भी दे रहे हैं, वह यह कि संसार में तीन प्रकार के ऐश्वर्य हैं—सत्य, यश और श्री। यज्ञोपवीतधारी को इन तीनों में से कोई एक चुनना होता है। ब्राह्मण के लिए सत्य मुख्य है, अन्य दो बातें गौण हैं। ब्राह्मण बनना है तो चोटी का सत्यवादी ब्राह्मण बनना, ऐसा-वैसा नहीं। क्षत्रिय बनना है तो यशस्वी और यशस्वी भी चोटी का, युद्ध में पीठ न दिखाने वाला, परन्तु साथ ही जीवन में सत्य भी हो। वैश्य बनना है तो साधारण पैसे वाला नहीं अपितु चोटी का बनना। कुबेर और भामाशाह भारत के ही थे। धन कमाना परन्तु सचाई के साथ और यश वालों की रक्षा भी करना।

यज्ञोपवीत के तीन तार परमात्मा, आत्मा और प्रकृति—इन तीन अनादि सत्ताओं का सम्यक् ज्ञान प्राप्त करने का भी संकेत देते हैं। यज्ञोपवीतधारी, परमात्मा क्या है ? उसका स्वरूप क्या है ? उसकी प्राप्ति कैसे होती है ? इत्यादि बातों को जानने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार मैं कौन हूँ ? मैं कहाँ से आया हूँ ? मुझे कहाँ जाना है ? मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है ? आदि आत्मज्ञान-सम्बन्धी समस्याओं को सुलझाता है। प्रकृति क्या है ? इससे किस प्रकार उपयोग लेकर मानव-जीवन को सुखी बनाया जा सकता है—आदि प्रकृति के ज्ञान को प्राप्त करने का प्रयत्न यज्ञोपवीतधारी करता है। जो यज्ञोपवीतधारी, 'मुझे परमात्मा, आत्मा और प्रकृति का ज्ञान प्राप्त करना है'—इस रहस्य को हृदयङ्गम करके यज्ञोपवीत धारण करता है उसका यज्ञोपवीत धारण करना सार्थक है।

तीन तार एक और रहस्य के भी सूचक हैं। प्रत्येक मनुष्य पर तीन प्रकार के ऋण होते हैं—पितृऋण, ऋषिऋण तथा देवऋण। प्रत्येक यज्ञोपवीतधारी को इन ऋणों से उऋण होने का प्रयत्न करना चाहिए।

माता-पिता जन्म देकर तथा लालन-पालन करके हमें बड़ा करते हैं। उनकी सेवा-सुश्रूषा करके यह ऋण कुछ सीमा तक चुकाया जा सकता है, इसलिए उपनिषद् के ऋषि ने 'मातृदेवो भव' और 'पितृदेवो भव' का उपदेश दिया है।

ब्रह्मा से लेकर महर्षि दयानन्द पर्यन्त सच्चे त्यागी, तपस्वी और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
वीतराग विद्वान् जिन्होंने वैदिक-संस्कृति और सभ्यता को हम तक पहुँचाया है तथा समय-समय पर हमारा मार्ग प्रदर्शन करते रहे हैं, हमारा कर्त्तव्य है कि हम उनके द्वारा दी हुई विद्या को पढ़कर, उपदेशों और लेखों द्वारा दूसरों तक पहुँचाएँ। यह ऋषि-ऋण से उऋण होने की विधि है।

वायु, अन्न, जल आदि देव हैं, यज्ञ द्वारा इनको शुद्ध करना देवऋण से उऋण होना है। इसका एक और अभिप्राय भी है—इन्द्रियों को भी देव कहते हैं, अतः समस्त इन्द्रियों का सदुपयोग जानकर उन्हें दृढ़ बनाना और उनका ठीक प्रयोग करना भी देवऋण चुकाना है। देव का अर्थ है परमात्मा। प्रतिदिन परमात्मा की उपासना करना।

यज्ञोपवीत के तीन धागे ब्रह्मग्रन्थि द्वारा आपस में जुड़े रहते हैं। यह इस बात का बोधक है कि मनुष्य ज्ञान, कर्म और उपासना तीनों को साथ-साथ प्राप्त करे।

यज्ञोपवीत में पाँच गाँठें होती हैं। पाँच गाँठें पंचमहायज्ञों को करने की ओर संकेत कर रही हैं। पितृऋण, ऋषिऋण और देवऋण चुकाने के लिए इन यज्ञों का करना अनिवार्य है।

पाँच ग्रन्थियों का एक और भी अभिप्राय है। प्रत्येक मनुष्य में काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार-रूपी पाँच गाँठें हैं। यज्ञोपवीत की ये ग्रन्थियाँ यज्ञोपवीतधारी को यह स्मरण कराती हैं कि इन गाँठों को खोलना है।

यज्ञोपवीत हाथ की चार अंगुलियों पर ९६ बार लपेटा जाता है। इस प्रकार यज्ञोपवीत का परिणाम ९६ चप्पे होता है। यह ९६ अंगुल ही क्यों होता है, इसके निम्न कारण हैं—

प्रत्येक व्यक्ति अपनी अंगुलियों से ९६ अंगुल का होता है, यदि सन्देह हो तो मापकर देख लें। ९६ अंगुल का यज्ञोपवीत हमें यह स्मरण कराता है कि यज्ञोपवीत कन्धे से कटिप्रदेश तक ही नहीं है अपितु शरीर का अङ्ग-प्रत्यङ्ग और प्रत्येक रोम इससे बिंधा हुआ है।

छान्दोग्य परिशिष्ट में इस प्रश्न का समाधान करते हुए कहा गया है—

तिथिवारं च नक्षत्रं तत्त्ववेदगुणान्वितम्।
कालत्रयं च मासाश्च ब्रह्मसूत्रं हि षण्णवम्॥

अर्थात् १५ तिथि, ७ वार, २७ नक्षत्र, २५ तत्त्व, ४ वेद, ३ गुण, ३ काल और १२ मास—इनकी कुल संख्या ९६ होती है। यज्ञोपवीत में वे सब निहित हैं अतः यज्ञोपवीत ९६ अंगुल का होता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मानवमान ८४ अंगुल का और देवमान ९६ अंगुल का होता है। यज्ञोपवीत धारण कर वेद-व्रत और ब्रह्म-व्रत का अनुष्ठान कर मनुष्य को देवत्व और अन्त में ब्रह्मत्व प्राप्त हो इसीलिए यज्ञोपवीत देवमान अर्थात् ९६ अंगुल का बनाया जाता है।

यज्ञोपवीत वाम स्कन्ध से धारित किया जाकर हृदय और वक्ष-स्थल पर होता हुआ कटि-प्रदेश तक पहुँचता है। इसमें भी एक बहुत बड़ा वैज्ञानिक रहस्य छुपा हुआ है। प्रत्येक मनुष्य के ऊपर तीन प्रकार के बोझ हैं। बोझ का भार कन्धे पर पड़ता है। इसलिए यज्ञोपवीत कन्धे पर होता है। संसार में बोझ को वही वहन कर सकेगा जो कटिबद्ध है, जिसकी कमर कसी हुई है इसलिए यज्ञोपवीत कटि-प्रदेश तक लटकता है। संसार में सफलता वही प्राप्त करेगा, जो लक्ष्य को अपने सम्मुख रखेगा और लक्ष्य उसी व्यक्ति के समक्ष रह सकता है जो किसी कार्य को हृदय से करे इसीलिए यज्ञोपवीत हृदय पर होता है।

यज्ञोपवीत का कन्धा, हृदय और कटि-प्रदेश पर ही ठहराने का एक और भी रहस्य है और वह यह है कि कन्धे के ऊपर ज्ञानेन्द्रियाँ आरम्भ हो जाती हैं, जिह्वा इसका अपवाद है। मनुष्य देव बन जाता है, वह संन्यास ले लेता है, और यज्ञोपवीत उतार दिया जाता है।

तीन ऋण एवं यज्ञों को हृदय से स्वीकार किया जाता है। हृदय वाम भाग में होता है इसलिए यज्ञोपवीत वामस्कन्ध से हृदय पर होता हुआ दाहिनी ओर धारण किया जाता है।

प्रत्येक यज्ञोपवीतधारी अपने राष्ट्र की उन्नति के लिए, सभ्यता और संस्कृति के प्रचार और प्रसार के लिए तथा मातृभाषा की रक्षा के लिए कटिबद्ध रहे, इसलिए यह यज्ञोपवीत कटि-प्रदेश तक लटकता है।

यज्ञोपवीत के सम्बन्ध में दो बातें ओर स्मरणीय हैं। एक यह कि प्रत्येक व्यक्ति को एक समय में एक ही यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए दो नहीं। दूसरी यह कि यज्ञोपवीत श्वेत होना चाहिए क्योंकि मन्त्र में उसे "शुभ्रं" कहा गया है।

मेखला

उपनयन संस्कार में मौंजी भी धारण करनी पड़ती है। वेद में मेखला के गुण इस प्रकार वर्णन किये हैं—

श्रद्धाया दुहिता तपसोऽधि जाता स्वस ऋषीणां भूतकृतां बभूव।
सा नो मेखले मतिमा धेहि मेधामथो नो धेहि तप इन्द्रियं च॥

—अथर्व० ६। १३३। ४

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह मेखला श्रद्धा की पुत्री, तप से उत्पन्न होने वाली, यथार्थकारी ऋषियों की बहिन है। यह मेखला हमें बुद्धि, मेधा, कष्टों को सहन करने का सामर्थ्य और इन्द्रियों की विशुद्धता प्रदान कराती है।

मेखला-धारण जहाँ वीर्य-रक्षण में सहायक है तथा अण्डकोषवृद्धि आदि रोगों को रोकता है, वहाँ शतपथ-ब्राह्मण के शब्दों में यह आत्मतेज भी प्रदान करता है, इसीलिए उपनयन के समय इसके धारण करने का विधान है।

अन्य मतों में यज्ञोपवीत

सिक्खों के प्रथम गुरु श्री नानकदेव जी की एक वाणी इस विषय में बहुत ही महत्त्वपूर्ण है :—

दया कपाह सन्तोष सूत, जत गंठी सत वट्ट।
एह जनेऊ जीऊ का हयिता पाण्डे धत्त॥
ना यह तुट्टे ना मल लागे न यह जले न जाय।
धन्न सो मानुस नानका जो गल चल्लै पाय॥

श्री नानकदेव जी यज्ञोपवीत को अति श्रेष्ठ समझते थे। अतः उन्होंने मानसिक-यज्ञोपवीत धारण करने पर विशेष बल दिया है। क्योंकि वह न कभी टूट सकता है और न कभी मैला हो सकता है।

जैनमत के 'आदिपुराण' में लिखा है कि "इस सवर्णी काल के प्रथम चक्रवर्ती भरत महाराज ने दिग्विजय यात्रा करके अनेक सेना सहित दिग्विजय की प्रथा चलाई। एक दिन राजद्वार में घास आदि बोकर उन्होंने सभी प्रजा को बुलाया। जो लोग घास पर से दरबार में आये उन्हें पूर्ण अहिंसक न समझा गया और घास पर जीव-हिंसा के भय से जो लोग नहीं आकर अन्य मार्ग से आये वे श्रेष्ठ ब्राह्मण पदवाच्य हुए और उन्हें उपवीत दिया गया।"

इस प्रकार जैन ग्रन्थों में भी यज्ञोपवीत का स्पष्ट उल्लेख है।

महात्मा गौतम बुद्ध ने "उपनयन को धर्म-मार्ग पर ले जाने वाला और उपवीत को शान्तपद की प्राप्ति" कहकर उल्लेख किया है।

—मंझिम निकाय १। ५। ६। तथा ३। २। ६॥

पारसियों के यज्ञोपवीत धारण करने का मन्त्र इस प्रकार है—

फ्राते मज्दाओ वरत् पौरवनीम् एयाओं धनिमस्तेहर पाये संघेम, मैन्युतस्तेम् बंधुहिम् दयेनीम् मज्दवास्नाम्॥ —जेन्द अ० प० ३, पृ० २३८॥

ऐ डोरा! तू तारों के समान तेजस्वी तथा श्रेष्ठ दैवीशक्ति वाला है। तथा आयु का देने वाला है। पवित्र पारसी धर्म के चिह्न यज्ञोपवीत!

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तुझे सब से पहले मज्दा ने धारण किया था, मैं तुझे पहनता हूँ।

इस प्रकार इतिहास के अवलोकन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि वैदिकधर्म में यज्ञोपवीत अत्यन्त प्राचीनकाल से चला आ रहा है।

उपनयन का समय

इस संस्कार का वेदानुकूल समय ब्राह्मण के लिए ८ वर्ष, क्षत्रिय के लिए ११ वर्ष, और वैश्य के लिए १२ वर्ष है। जैसा कि मनु जी महाराज ने लिखा है :—

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनयनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः॥ —मनु० २। ३६

व्यासस्मृति तथा महाभारत आदि में भी ऐसा ही विधान है। परन्तु यदि उपर्युक्त समय पर यज्ञोपवीत न हो सके तो ब्राह्मण का १६, क्षत्रिय का २२ और वैश्य का २४ वर्ष से पूर्व यज्ञोपवीत हो जाना चाहिए। यदि इस समय तक भी यज्ञोपवीत संस्कार न हो तो ये पतित हो जाते हैं।

स्त्रियों को यज्ञोपवीत का अधिकार

कुछ धर्म के ठेकेदार इस अत्यन्त पवित्र और महत्त्वपूर्ण संस्कार से स्त्रियों को वंचित रखना चाहते हैं परन्तु प्राचीन ग्रन्थों के अवलोकन से पता चलता है कि प्राचीन काल में पुरुषों की भाँति स्त्रियों को भी यज्ञोपवीत पहनने का अधिकार था जैसा कि पारस्कर गृह्यसूत्र में लिखा है—

स्त्रियः उपनीता अनुपनीताश्च।

—पा० गृ० सू० पृ० ८४, सिद्धिविनायक प्रेस, सं० १९३६॥

इसी प्रकार यम-संहिता में लिखा है—

पुराकल्पे तु नारीणां मौञ्जिबन्धनमिष्यते।
अध्यापनं च वेदानां सावित्री वचनं तथा॥

अर्थात् प्राचीन समय में कन्याओं का उपनयन संस्कार होता था तथा उन्हें गायत्री का जप और वेदाध्ययन करने की भी आज्ञा थी।

महर्षि दयानन्द ने अपने एक प्रवचन में कहा था—"स्त्रियों को भी विद्या सम्पादन का अधिकार पहले था और उसके अनुकूल इनका व्रतबन्ध पूर्व में करते थे।" —उपदेश मञ्जरी सातवां व्याख्यान॥

यज्ञोपवीत और गायत्री

यज्ञोपवीत और गायत्री का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः यहाँ गायत्री मन्त्र के सम्बन्ध में दो-चार शब्द लिखना अप्रासङ्गिक न होगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गायत्री मन्त्र यह है—

ओ३म् । भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि ।
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ —यजु० ३६ । ३ ॥

इस मन्त्र का सरलार्थ इस प्रकार है :—

हे सर्वरक्षक ! सच्चिदानन्द स्वरूप, सकलजगदुत्पादक, सूर्यादि प्रकाशकों के भी प्रकाशक ! आपके सर्वश्रेष्ठ पाप-नाशक तेज को हम धारण करते हैं । हे परमात्मन् ! हमारी बुद्धि और कर्मों को उत्तम कामों में प्रेरित कर ।

मनु महाराज गायत्री के विषय में लिखते हैं :—

सावित्र्यास्तु परं नास्ति । —मनु० २ । ८३ ॥

गायत्री से श्रेष्ठ कुछ भी नहीं है ।

वास्तव में वेद-शास्त्र, पुराण और स्मृतियाँ गायत्री की महिमा से भरे पड़े हैं । इस की महिमा महान् है । जो इसका जप और अनुष्ठान करता है वही इसके प्रभाव को जानता है ।

यज्ञोपवीत-सम्बन्धी कुछ प्रश्नोत्तर

प्रश्न :—क्या मलमूत्र त्यागने से पूर्व यज्ञोपवीत को कान पर चढ़ाना आवश्यक है ?

उत्तर :—नहीं, यह आवश्यक नहीं है । कुछ लोग यज्ञोपवीत को कान पर चढ़ाने में यह हेतु देते हैं कि कर्णेन्द्रिय और मूत्रेन्द्रिय का आपस में सम्बन्ध है और यज्ञोपवीत को कान पर चढ़ाने से किसी नाड़ी-विशेष पर दबाव आदि पड़ने से वीर्यदोषादि रोग नहीं होते, परन्तु आयुर्वेद और पाश्चात्य शरीर-विज्ञान-सम्बन्धी ग्रन्थों में ऐसा कोई उल्लेख नहीं है कि कर्णेन्द्रिय और मूत्रेन्द्रिय का आपस में कोई सम्बन्ध है । हाँ, इतनी बात अवश्य है कि मलमूत्र विसर्जन करते समय यज्ञोपवीत नाभि से ऊपर रहना चाहिए जिससे मूत्रादि के छींटे न लगें ।

प्रश्न :—यज्ञोपवीत अपवित्र कैसे होता है ?

उत्तर :– यदि यज्ञोपवीत संस्कार होने के पश्चात् तीन दिन तक सन्ध्या न करे तो द्विज शूद्रवत् हो जाता है । वह प्रायश्चित्त करने पर शुद्ध होता है और पुनः संस्कार कराना लिखा है । जन्म-शौच, मरण-शौच रजस्वला-स्पर्श, और टूट जाने पर यज्ञोपवीत अपवित्र हो जाता है; तब उस यज्ञोपवीत को उतार कर नूतन यज्ञोपवीत धारण करना चाहिए ।

—★—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमारे द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की सूची

म० आनन्द स्वामी		**ब्र० जगदीश विद्यार्थी**	
दो रास्ते	३.००	ईशोपनिषद्	२.००
यह धन किसका है ?	४.००	दयानन्द सूक्ति और सुभाषित	४.००
बोध कथाएं	३.००	श्रीमद् वाल्मीकि रामायण	२५.००
प्रभु मिलन की राह	४.५०	वेदसौरभ	२.००
मानव और मानवता	५.५०	वैदिक उदात्त भावनाएं	२·००
तत्त्वज्ञान	५.००	ऋग्वेदशतक	१.५०
प्रभुदर्शन	३.५०	यजुर्वेदशतक	१.५०
घोर घने जंगल में	५.००	सामवेदशतक	१.००
प्रभुभक्ति	२.००	अथर्ववेदशतक	१.५०
उपनिषदों का संदेश	२.००	चतुर्वेदशतक	६.००
महामन्त्र	१.५०	वैदिकप्रश्नोत्तरी	२.००
आनन्द गायत्री-कथा	१.५०	कुछ करो कुछ बनो	२.००
एक ही रास्ता	१.२५	ब्रह्मचर्य गौरव	२.००
मानव जीवन-गाथा	१.७५	विद्यार्थियों की दिनचर्या	१.५०
भक्त और भगवान्	१.२५	दिव्य दयानन्द	१.५०
शंकर और दयानन्द	१.२५	मर्यादा पुरुषोत्तम राम	२.००
सत्यनारायण व्रत कथा	१.००	आदर्श परिवार	४.००
सुखी गृहस्थ	१.२५	**स्वामी दयानन्द**	
The Only Way	२.५०	सत्यार्थप्रकाश (सजिल्द)	५.५०
म० आनन्द स्वामी (जीवनी)	८.००	आत्मकथा	०.४०
,, ,, उर्दू	१०.००	स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश	०.१५
प्रो० विष्णुदयाल		वेदान्तिध्वान्तनिवारण	०.२०
वेद भगवान् बोले	४.००	आर्याभिविनय	०.७५
स्वामी सर्वदानन्द		शिक्षापत्रीध्वान्तनिवारण	०.३७
आनन्द उपदेशमाला	१.५०	आर्योद्देश्यरत्नमाला	०.१५
सत्यव्रत सिद्धांतालंकार		भ्रान्तिनिवारण	०.३७
ब्रह्मचर्य संदेश	५.००	व्यवहारभानु	०.३०
संकलित		पंचमहायज्ञविधि	०.४०
पं० रामचन्द्र देहलवी लेखावली	५.००	भ्रमोच्छेदन	०.३०
स्वामी सत्यानन्द		गोकरुणानिधि	०.२०
दयानन्दप्रकाश	१५.००	आर्यसमाज नियमोपनियम	०·१०
		बालशिक्षक	०.३७

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri. Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प० भगवद्दत्त

भारतीय संस्कृति का इतिहास ६.००

पं० वीरसेन वेदश्रमी

वैदिक सम्पदा २०.००

वैद्य गुरुदत्त

विश्वेदेवा ६.००

पं० सुखदेव

नमस्ते की व्याख्या ०.२५

शुक्राचार्य

शुक्रनीति १२.००

नित्यानन्द वेदालंकार

सन्ध्या विनय १.५०

प्रार्थनादीप २.००

पूर्व और पश्चिम ७.५०

जीवन की राहें ४.००

सुराज्य की रूपरेखा ०.५०

नारायण स्वामी

प्राणायाम-विधि ०.२५

आर्यसमाज क्या है ? १.००

सुरेशचन्द्र एम० ए०

मन की अपार शक्ति १.२५

आकर्षक व्यक्तित्व कैसे बने १.५०

स्वामी ब्रह्ममुनि

वृहदारण्यक कथामाला ३.००

स्वामी अच्युतानन्द

व्याख्यानमाला २.५०

पं० भीमसेन

श्वेताश्वतर उपनिषद् १.००

पं० राजेन्द्र

भारत में मूर्तिपूजा ३.००

स्वामी वेदानन्द

स्वाध्यायसंग्रह ३.००

पं० धर्मदेव

गोरक्षा परम कर्त्तव्य ०.५०

स्वेट मार्डन

उन्नति कैसे करें ? २.००

धनकुवेर कैसे बनें ? २.००

अपना खर्च कैसे घटायें ? २.००

सफल कैसे हों ? २.००

अवसर को पहचानो २.००

अपने आप को पहचानिए २.००

विद्यासागर

अष्टोत्तरशतनाममालिका ६.१०

रणवीर

शंकर-लेखमाला ३.५०

शिवपूजन सिंह

वैदिक सिद्धान्तमार्तण्ड २.००

सत्यभूषण वेदालंकार एम. ए.

वैदिक धर्मशिक्षा प्रथम भाग ०.३०

वैदिक धर्मशिक्षा द्वितीय भाग ०.४०

वैदिक धर्मशिक्षा तृतीय भाग ०.६०

वैदिक धर्मशिक्षा चतुर्थ भाग ०.६०

वैदिक धर्मशिक्षा पंचम भाग ०.७५

वैदिक धर्मशिक्षा षष्ठ भाग ०.८०

वैदिक धर्मशिक्षा सप्तम भाग ०.९०

वैदिक धर्मशिक्षा अष्टम भाग ०.९०

गोविन्दराम हासानन्द

४४०८ नई सडक दिल्ली फोन २६४९४३

मुद्रक, प्रकाशक, विजयकुमार ने सम्पादित कर एस० नारायण एण्ड संस पहाड़ी धीरज. दिल्ली में मुद्रित कर वेदप्रकाश कार्यालय, ४४०८ नईसड़क, दिल्ली में प्रकाशित किया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi